अध्याय 3
क़ानून की अदालत
आपके अधिकारों को लागू करते हुए

किसी समय उत्तर भारत के एक छोटे-से गाँव में मनोज नाम का एक किसान रहता था. वह अपने खेत में कड़ी मेहनत करता था और फसलें उगाने में उसने बहुत सारा समय और पैसा अपने खेतों में लगाया. लेकिन उस साल मौसम ख़राब रहा और मनोज की फसलें बरबाद हो गईं. मनोज को भारी आर्थिक नुक़सान उठाना पड़ा.

यह एक अच्छी बात थी कि मनोज ने एक सरकारी बीमा कंपनी से फसल बीमा योजना ले रखी थी. उसने अपने मुआवज़े के लिए बीमा कंपनी से संपर्क किया. लेकिन कंपनी ने उसके दावे को कुछ तकनीकी कारण बताते हुए ख़ारिज कर दिया.

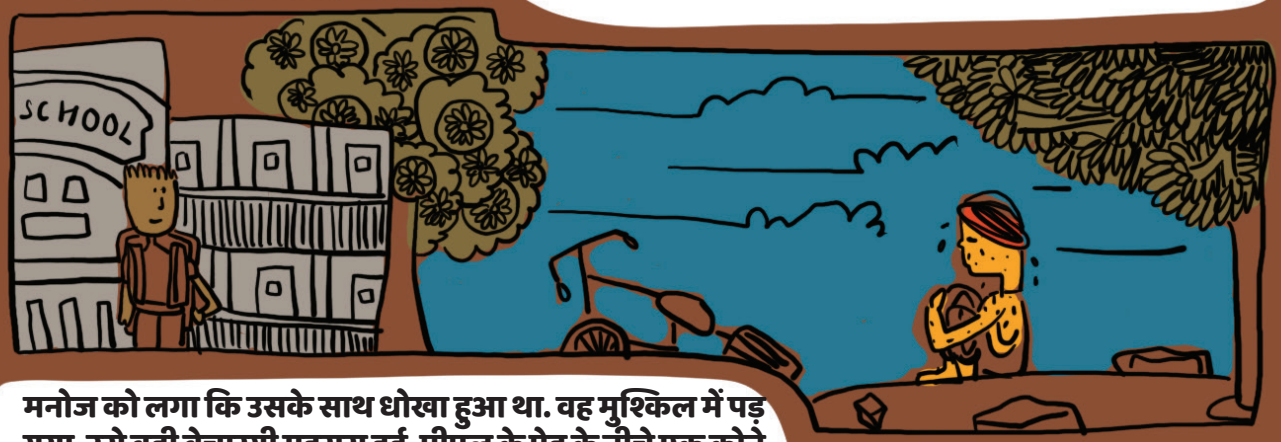

मनोज को लगा कि उसके साथ धोखा हुआ था. वह मुश्किल में पड़ गया, उसे बड़ी बेचारगी महसूस हुई. पीपल के पेड़ के नीचे एक कोने में मनोज को दुखी और परेशान देख कर विवेक ने उससे बात करने की कोशिश की. विवेक स्थानीय स्कूल में पढ़ने वाला एक लड़का था. उसने पूछा कि क्या वह मनोज की कोई मदद कर सकता है. मनोज ने अपनी कहानी विवेक को सुना दी.

विवेक को भी नहीं पता था कि ऐसे में क्या किया जा सकता था. उसे भी असहाय महसूस हुआ. लेकिन उसने इस घटना को अपने स्कूल के हेडमास्टर को बताया. उन्होंने विवेक से कहा कि सरकारी बीमा कंपनी के ख़िलाफ़ क़ानूनी विकल्पों को अपनाया जा सकता है. विवेक को पता नहीं था कि यह कदम कैसे उठाया जाए. तब हेडमास्टर ने मनोज से अपने स्कूली दिनों के एक दोस्त से मिलने को कहा. वे स्थानीय अदालत में एक न्यायालय सहायक थे. विवेक अगले दिन उनसे मिला और जानकारी ली. विवेक ने मनोज को तसल्ली दी और उसको स्थानीय अदालत जाने का आग्रह किया.

अदालत में कुछ वकीलों से मिलने के बाद मनोज को भी भरोसा हुआ और उसने अदालतों के ज़रिए इंसाफ़ हासिल करने का फ़ैसला किया. उसने स्थानीय उपभोक्ता फ़ोरम में एक मामला दाख़िल किया, जिसमें उसने अपने नुक़सान की भरपाई और अपने दावों को ग़लत तरीक़े से ख़ारिज करने के लिए बीमा कंपनी के ख़िलाफ़ कार्रवाई की माँग की. शुरू-शुरू में मनोज को कई मुश्किलों का सामना करना पड़ा. उसके पास पैसे नहीं थे. क़ानूनी प्रक्रिया लंबी थी. लेकिन अपने अधिकारों के लिए लड़ने को लेकर उसका इरादा पक्का था. उसने अदालत में अपना पक्ष रखने के लिए एक वकील को भी रखा. विवेक को इससे ख़ुशी हो रही थी कि वह मनोज की मदद कर सका.

महीनों तक चली सुनवाई के बाद अदालत ने किसान की व्यथा को और उसके साथ होने वाले अन्याय की बात को क़बूल किया. जज ने आदेश दिया कि बीमा कंपनी मनोज को मुआवज़े का भुगतान करे. बीमा कंपनी ने अपील करने की कोशिश की, लेकिन ऊपर की अदालत ने ज़िला अदालत के फ़ैसले को क़ायम रखा. कंपनी को आदेश दिया गया कि वह मनोज को मुआवज़े का भुगतान करे.

मनोज की जीत सिर्फ़ एक व्यक्तिगत जीत नहीं थी. इसने उन दूसरे किसानों के लिए एक क़ानूनी राह खोल दी, जो अपनी फसल के बीमा दावों को लेकर ऐसे मुद्दों का सामना कर रहे थे. मनोज का मामला एक ऐसी मिसाल बन गया कि किस तरह क़ानून द्वारा दिए गए अधिकार और भारतीय अदालती व्यवस्था इंसाफ़ के लिए एक शक्तिशाली औज़ार हो सकते हैं. इसने विवेक को भी भारी प्रोत्साहन दिया, जो अब एक एनजीओ चलाता है. यह एनजीओ किसानों और दूसरे वंचित समूहों के लोगों को क़ानूनी मदद दिलाता है.

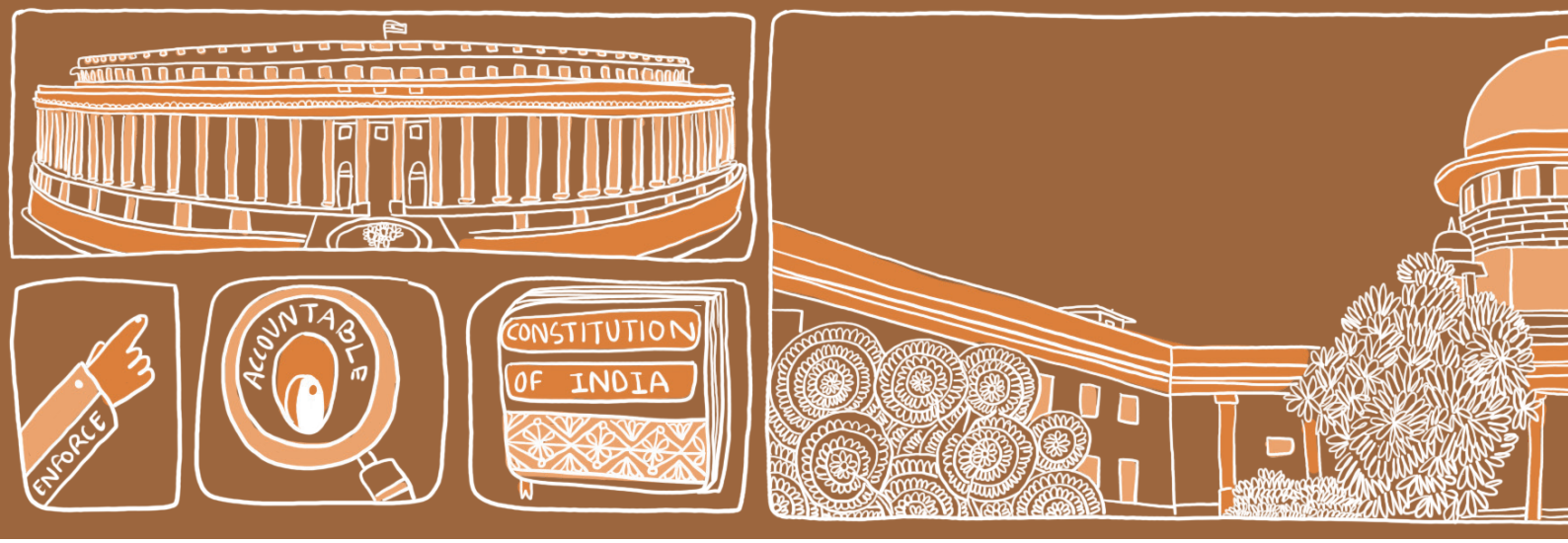

अदालतों का एक परिचय

मनोज की कहानी प्रेरणादायक है, लेकिन यह कई सवाल भी खड़े करती है. विवेक वयस्क नहीं था, ऐसे में क्या वह सीधे अदालत जा सकता था? क्या विवेक मनोज के लिए मामला दायर कर सकता था? क्या इस मामले को जनहित में दायर किया जा सकता था? क्या यह एक जनहित का मामला है?

अदालतें हतोत्साहित कर सकती हैं, उनसे डर भी लग सकता है. अगर आपने कभी सचमुच की अदालत देखी हो तो आप गौर करेंगे कि हर कोई व्यस्त दिखता है, हर कोई बहुत महत्वपूर्ण लगता है. वहाँ कई क़िस्म के नियम और पाबंदियाँ होती हैं और एक बाहरी इंसान को वहाँ गंभीरता से लिया जाना मुश्किल है. ख़ास कर अगर वह कोई कम उम्र का इंसान हो. क्या आपको लगता है कि यह जगह आपके लिए नहीं बनी है?

अदालतें उस ढाँचे का हिस्सा हैं जिससे एक जीवंत और सबको साथ लेकर चलने वाला लोकतंत्र बनता है. नागरिकों के बीच आपसी रिश्ते और नागरिकों और सरकार के बीच के रिश्ते और उनके अधिकारों को क़ानूनों के ज़रिए ही अमल में लाया जाता है. अदालतें इन्हीं क़ानूनों को लागू करने के लिए ज़िम्मेदार हैं. लोगों से उम्मीद की जाती है कि वे अदालतों का इस्तेमाल करते हुए सरकार और चुने हुए जन प्रतिनिधियों को जवाबदेह बनाएँगे. अदालतें सरकार की कार्रवाइयों की समीक्षा करते हुए, आज्ञापत्र (writ) जारी करते हुए, मौलिक अधिकारों को लागू करते हुए इस काम को अंजाम देती हैं. इस काम में वे नागरिकों के लिए यह संभव बनाती हैं कि वे जनहित याचिकाओं (अर्थ के लिए शब्दावली देखें) के ज़रिए अदालतों के पास आ सकते हैं. यह तंत्र सुनिश्चित करता है कि सरकार अपने कामकाज में क़ानून और संविधान का पालन करे और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करे. क़ानून बनाना सरकार का काम है, और अदालतों का काम यह पक्का करना है कि क़ानून लागू हो. अदालत किसी भी लिहाज़ से सरकार की भागीदार नहीं है. इससे उम्मीद की जाती है कि वह स्वतंत्र रूप से काम करेगी. क़ानून के शासन को मज़बूत बनाते हुए और नागरिकों के अधिकारों का बचाव करते हुए, अदालतें लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देने में मदद कर सकती हैं. वे यह पक्का करती हैं कि इंसाफ़ तक सबकी पहुँच हो सके.

लेकिन रोज़मर्रा के जीवन में ये सिद्धांत कैसे काम करते हैं? विवेक को जिस तरह रास्ता नहीं सूझ रहा था, वह हालत कइयों की हो सकती है. अगर आपको कुछेक बुनियादी बातें पता हों तो इससे मदद मिल सकती है.

अनुच्छेद 39A

अदालतों के बारे में जानने से पहले यह याद रखें कि भारतीय संविधान में क़ानूनी सलाह और मदद के अधिकार को एक मौलिक अधिकार कहा गया है. क़ानूनी मदद में पुलिस थाने से लेकर सर्वोच्च न्यायालय तक न्यायिक प्रक्रिया की सभी अवस्थाओं में मुफ़्त क़ानूनी सलाह, प्रतिनिधित्व, और मदद शामिल है. संविधान के अनुच्छेद 39A के तहत राज्य की यह ज़िम्मेदारी बनती है कि वह मुफ़्त क़ानूनी मदद मुहैया कराते हुए यह सुनिश्चित करे कि कोई व्यक्ति आर्थिक या दूसरी वजहों से इंसाफ़ से वंचित न रह जाए.

भारत में सभी नागरिकों को क़ानूनी मदद का अधिकार हासिल है, जिसमें महिलाएँ, बच्चे, अनुसूचित जातियों और जनजातियों

के सदस्य और समाज के हाशिए पर दूसरे तबके शामिल हैं जो क़ानूनी सेवाओं का खर्च नहीं उठा सकते हों.

इस संवैधानिक आदेश को क़ानूनी रूप देते हुए क़ानूनी सेवा प्राधिकार अधिनियम, 1987 ने इसे प्रभावी बनाया है. इस अधिनियम के ज़रिए राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तरों पर क़ानूनी सेवा प्राधिकार बनाए गए ताकि ज़रूरतमंद लोगों की क़ानूनी मदद पहुँचाई जा सके. आपराधिक (फ़ौजदारी) मामलों में अगर किसी आरोपित व्यक्ति के पास वकील का ख़र्च उठा सकने की क्षमता नहीं हो तो अदालत उसका प्रतिनिधित्व करने के लिए एक वकील नियुक्त कर सकती है. दीवानी मामलों में उन लोगों को क़ानूनी मदद पहुँचाई जाती है जो मुक़दमे के खर्चे नहीं उठा सकते हैं.

क्या आप उस क़ानूनी सेवा प्राधिकार की पहचान कर सकते हैं जो आपके राज्य, ज़िले या तहसील में क़ानूनी मदद मुहैया कराता है?

दस्तावेज़, लोग, विधियाँ

तो मान लीजिए आपको अदालत के पास जाना है. आप तैयारी कैसे करेंगे?

(क) दस्तावेज़: अदालत के सामने अपना मामला साबित करने के लिए जो सबसे चुनौतीपूर्ण काम है वह है दस्तावेज़ों को तैयार करना. कई बार ऐसा होता है कि मामले लिखित दस्तावेज़ों पर आधारित नहीं होते हैं. और ऐसे हालात में यह याद रखना अहम है कि कौन लोग गवाह होंगे और उनके बयान से क्या साबित होगा. इसलिए वकील से संपर्क करने से पहले अगर संभव हो तो सभी ज़रूरी काग़ज़ों को जमा करें जिनके आधार पर आप अपना मामला पेश करना चाहते हैं. अगर मामला सरकार के ख़िलाफ़ हो और जहाँ किसी सरकारी कर्मी/अधिकारी से किसी कार्रवाई की अपेक्षा हो, तो अदालत से संपर्क करने से पहले यह महत्वपूर्ण है कि उन्हें भी एक पत्र भेजा जाए. या फिर सरकारी अधिकारी के नाम एक आवेदन (पद के आधार पर) भेज कर उनसे माँग करें कि वे अपने पद से जुड़ा कर्तव्य निभाएँ. यह याद रखें कि क़ानून आपसे अपेक्षा करता है कि ऐसा एक आग्रह करने के बाद अगर आपकी समस्या का समाधान नहीं होता है तो आप एक उचित अवधि के भीतर अदालत से संपर्क करें.

(ख) क़ानूनी स्थिति: अदालत से कौन संपर्क कर सकता है, इस बारे में स्थिति संबंधी नियम को उदार बनाया गया है. इसके बावजूद संपत्ति, निजी नुकसान, अपराध और सेवा-रोज़गार संबंधी मामलों में अदालत यह अपेक्षा करती है कि शिकायतकर्ता ख़ुद अदालत से संपर्क करें. एक तीसरा व्यक्ति या पक्ष तभी अदालत के पास जा सकता है अगर मामला व्यापक जनहित का हो. जैसे कि अगर किसी गाँव में एक सार्वजनिक स्कूल की इमारत पर किसी ने क़ब्ज़ा करके उसमें अपना अनाज रख दिया हो, तब कोई भी व्यक्ति इसके ख़िलाफ़ अदालत जा सकता है.

(ग) जनहित याचिका (पीआईएल): भारतीय न्यायिक व्यवस्था में पीआईएल को एक ऐसी विशेषता के रूप में अपनाया गया है जो एक

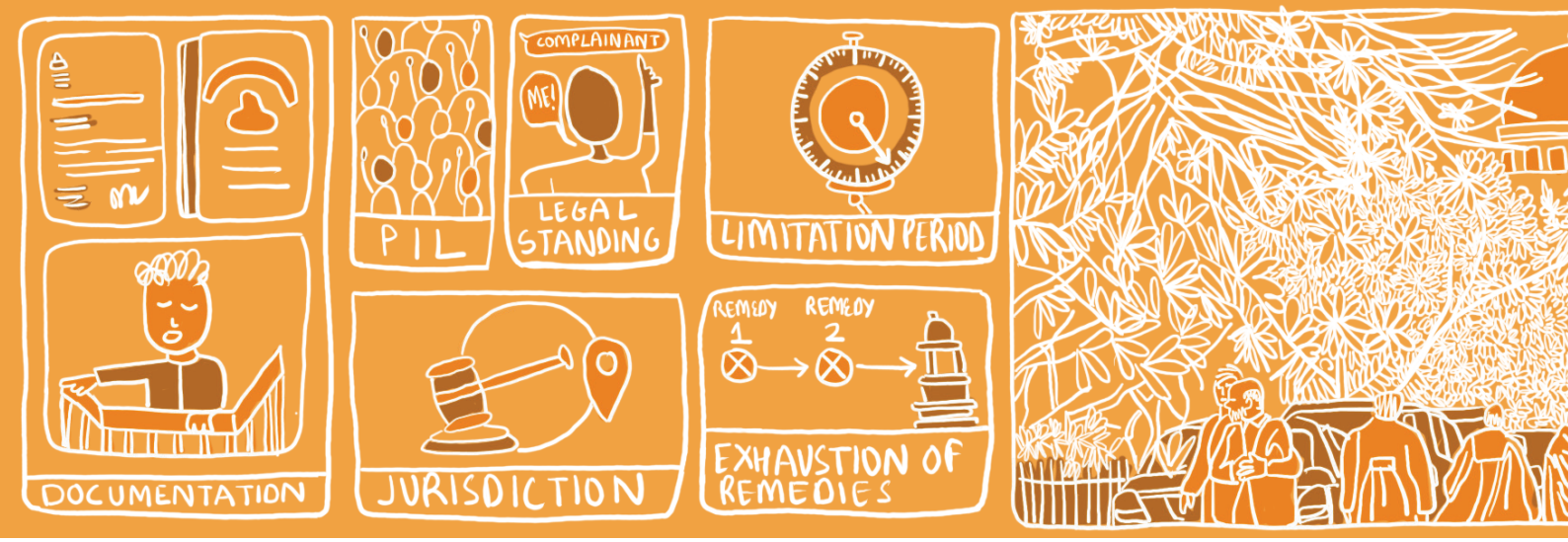

साधारण इंसान को उच्च या सर्वोच्च न्यायालय से निर्देश लेने की इजाज़त देता है, भले ही उस व्यक्ति का कोई निजी हित इस मामले से न जुड़ा हो. इस व्यवस्था का उपयोग पर्यावरण, इंटरनेट बंद करने, क़ानून की वैधता, न्यायिक आज़ादी, राजनीतिक दलों के लिए चंदे और भ्रष्टाचार आदि मामलों में किया गया है.

(घ) न्यायिक अधिकार क्षेत्र: अब अगली शर्त यह है कि आपको यह याद रखना है कि किस अदालत से संपर्क किया जाए. इसको देखने के दो तरीक़े हैं. पहला तरीका, आप जो समाधान चाहते हैं उसके आधार पर आपको फ़ैसला करने की ज़रूरत है कि क्या आपको स्थानीय अदालत के पास जाना चाहिए, या उच्च न्यायालय या किसी ट्रिब्यूनल के पास. दूसरा तरीक़ा, आपका मामला जिस जगह से जुड़ा हुआ है और जितनी रक़म का मामला है, इस बात पर यह निर्भर करेगा कि इस मामले की सुनवाई करना किस अदालत के अधिकार क्षेत्र में आता है. जैसे कि अगर कोई संपत्ति लखनऊ में है तो इसके बारे में बेंगलुरु में मामला दाख़िल करना मुमकिन नहीं है.

(च) समय सीमा: किसी मामले को दाख़िल करने की एक विशेष अवधि निर्धारित है और इसे उसी के भीतर किया जा सकता है. इसे सीमित अवधि या समय सीमा कहा जाता है. क़ानून यह अपेक्षा करता है कि कोई मामला तयशुदा अवधि के भीतर ही दाख़िल किया जाए, वरना तयशुदा समय सीमा बीत जाने के बाद अदालत उस मुक़दमे की सुनवाई नहीं करेगी.

(छ) समाधान के दूसरे उपाय आज़माए जा चुके हों: कुछ मामलों में यह ज़रूरी है कि अदालत के पास जाने से पहले समस्या के समाधान के दूसरे उपायों को आज़माया जा चुका हो. जैसे कि श्रम संबंधी विवादों में पक्षों के लिए अदालत में मामला दाखिल करने से पहले संवाद और मध्यस्थता की कोशिश करना ज़रूरी हो सकता है.

अवयस्कों के लिए अदालत पहुँचने पर कोई रोक नहीं है, लेकिन मामले को किसी क़ानूनी संरक्षक (□□□□□□□□) या करीबी दोस्त के ज़रिए ही दाखिल करना होगा.

इंसाफ़ और अदालतों तक पहुँच के मुद्दों को दूर करने के लिए अदालतों ने □चिट्ठी से याचिका□ की पद्धति खोजी है. चिट्ठी से याचिका के अधिकार क्षेत्र के तहत, उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय मामले की सुनवाई कर सकते हैं, मामले की छानबीन और जाँच करवा सकते हैं, और उचित आदेश जारी कर सकते हैं या फिर इससे संबंधित संस्थाओं या व्यक्तियों को मुद्दे को हल करने के लिए निर्देश दे सकते हैं.

कौन-सी अदालत?

भारत में अदालती व्यवस्था एक जटिल जाल की तरह दिखाई पड़ सकती है, लेकिन इस अस्त-व्यस्तता में एक व्यवस्था निहित है. हरेक अदालत एक सीढ़ीदार व्यवस्था पर आधारित है, जो महत्वपूर्ण है. यही व्यवस्था यह तय करती है कि किस तरह के मामलों की सुनवाई हो सकती है और अगर उनकी अपील करने की ज़रूरत पड़ी तो कहाँ जाया जा सकता है.

ज़्यादातर अदालतें कोड ऑफ सिविल प्रोसीजर, 1908 के तहत क़ायम हुई हैं और इस कोड का, आपराधिक दंड विधान और भारत का संविधान का पालन करती हैं. इनसे अलग कुछ ऐसी अदालतें भी हैं जिन्हें कुछ विशेष अधिनियमों के तहत क़ायम किया जाता रहा है.

देश के विभिन्न उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय संवैधानिक अदालतें हैं. इसका मतलब यह है कि इस बात को सुनिश्चित बनाने के लिए उनके पास व्यापक शक्तियाँ हैं कि किन्ही क़ानूनों ने मौलिक अधिकारों का हनन किया है या नहीं. विशेष अधिनियमों के तहत क़ायम की गई दूसरी अदालतें एक बहुत विशेष ज़िम्मेदारी निभाने के लिए बनी होती हैं और वे उस विषय से संबंधित क्षेत्र से जुड़ी होती हैं, जैसे कि पारिवारिक मामले, कंपनियों का दिवालिया होना, बीमा, वगैरह.

ट्रिब्यूनल अपनी प्रकृति में अर्ध न्यायिक संस्थान हैं और उन्हें किसी तयशुदा विषय वस्तु से निबटने के लिए बनाया जाता है. अदालती व्यवस्था में मुक़दमों के बहुत समय तक लंबित रहने के हल के लिए और कारगरता को बढ़ाने के लिए इनको क़ायम किया गया. ट्रिब्यूनल कर, भूमि सुधार, किराया और किरायेदारों के अधिकारों और पर्यावरणीय मामलों तक को देखते हैं.

अपने मुहल्ले में घूमें और लोगों से अपनी सबसे करीबी अदालत के बारे में बातें करें. आप इंटरनेट की मदद भी ले सकते हैं. आपके सबसे नज़दीक कौन-सी अदालत है और यह नीचे दी गई अदालती सीढ़ीदार व्यवस्था में कहाँ पर मौजूद है? उच्च न्यायालय अपने नीचे आने वाली सभी अदालतों को सुपरवाइज़ करती है, लेकिन उच्च न्यायालय किस अदालत के मातहत आता है?

सर्वोच्च न्यायालय
उच्च न्यायालय
राज्य स्तर पर
जिला स्तर पर मातहत अदालतें
महानगरीय अदालतें
जिला व सत्र न्यायालय
दिवाणी
फ़ौजदारी
दिवाणी
फ़ौजदारी
दीवानी नगर न्यायालय
सत्र न्यायालय (सत्र न्यायाधीश)
जिला न्यायालय (जिला न्यायाधीश)
सत्र न्यायालय (सत्र न्यायाधीश)
छोटे मामलों संबंधी अदालतें
मुख्य महानगरीय न्यायालय (मुख्य महानगरीय न्यायाधीश)
उप न्यायालय (वरिष्ठ दीवानी न्यायाधीश)
न्यायिक मजिस्ट्रेट अदालत (फ़र्स्ट क्लास) (मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट)
महानगरीय मजिस्ट्रेट अदालतें (महानगरीय मजिस्ट्रेट फ़र्स्ट क्लास)
मुख्य जूनियर दीवानी न्यायाधीश कोर्ट (मुख्य जूनियर सिविल जज)
न्यायिक मजिस्ट्रेट कोर्ट (सेकंड क्लास) (न्यायिक मजिस्ट्रेट सेकंड क्लास)
मुन्सिफ अदालत (जिला मुन्सिफ, या जूनियर सिविल जज)

आज्ञापत्र, अधिकार और हल

संविधान में उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय को एक बहुत अहम जगह दी गई है. उनके पास अपील की जा सकती है, यह तो उनके अधिकार क्षेत्र में आता ही है, उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय के पास आज्ञापत्र जारी करने की शक्ति भी है. अंग्रेज़ी में इन्हें रिट (writ) कहा जाता है. ये आज्ञापत्र सरकारी कामकाज के संदर्भ में अदालतों द्वारा विशेष दिशा-निर्देश होते हैं और कोई भी नागरिक इनकी माँग कर सकता है.

उच्च न्यायालयों के पास संविधान की व्याख्या करने की शक्ति है. वे यह तय कर सकती हैं कि क़ानून और कार्यपालिका की कार्रवाइयाँ संविधान के मुताबिक़ वैध हैं या नहीं. यह एक अहम भूमिका है, क्योंकि यह सुनिश्चित करता है कि क़ानून और कार्रवाइयाँ संविधान के मुताबिक़ चल रही हैं और यह नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करता है. जैसे कि जब मेनका गांधी के पासपोर्ट को वापस लेकर विदेश यात्रा करने के उनके अधिकार को सीमित कर दिया गया था, तो उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय के पास जाकर यह माँग की कि क़ानून के ज़रिए यात्रा के अधिकार को एक मौलिक अधिकार घोषित किया जाए. यह माँग भी की कि क़ानून की समुचित प्रक्रिया का पालन किए बिना सरकार इस अधिकार को सीमित नहीं कर सकती है.

संविधान के बारे में पिछले अध्याय पर वापस जाएँ और मौलिक अधिकारों वाले सेक्शन में देखें कि कौन से अधिकार आज्ञापत्रों के ज़रिए हासिल हुए हैं.

बंदी प्रत्यक्षीकरण: किसी भी व्यक्ति को हिरासत में नहीं रखा जा सकता है, ऐसा सिर्फ़ तभी किया जा सकता है जब कानूनी प्रक्रियाओं का पालन करके हिरासत में लिया गया हो. अगर किसी व्यक्ति को क़ानूनी तरीक़े के बिना किसी निजी व्यक्ति द्वारा या किसी सरकारी एजेंसी द्वारा हिरासत में रखा गया है तो आप बंदी प्रत्यक्षीकरण के आज्ञापत्र की माँग कर सकते हैं. उच्च न्यायालय में ऐसी रिट याचिकाओं की सुनवाई में पुलिस से उम्मीद की जाती है कि वे ऐसे व्यक्ति को खोज कर या उनका पता लगा कर पेश करेंगे. लेकिन अगर कोड ऑफ़ क्रिमिनल प्रोसीज़र, 1973 के तहत पुलिस को दी गई शक्तियों के तहत किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया हो या निरोधक हिरासत में लिया गया हो, तो रिट की याचना नहीं की जा सकती है.

परमादेश: इस रिट याचिका का उपयोग सरकारी कर्मियों या संगठनों को अपना उचित तरीक़े से करने या क़ानून के मुताबिक़ ज़रूरी बनाए गए अपने कर्तव्यों को पूरा करने के लिए बाध्य करने की ख़ातिर किया जाता है. अगर क़ानून में किसी कर्तव्य को तय किया गया है, तब आप उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के पास जाकर उस व्यक्ति को अपना कर्तव्य निभाने के लिए बाध्य करने की माँग कर सकते हैं. परमादेश हासिल करने के लिए रिट याचिका दायर करने की पूर्व शर्त यह है कि पहले आप उस व्यक्ति से संपर्क करके उसे अपना कर्तव्य निभाने का

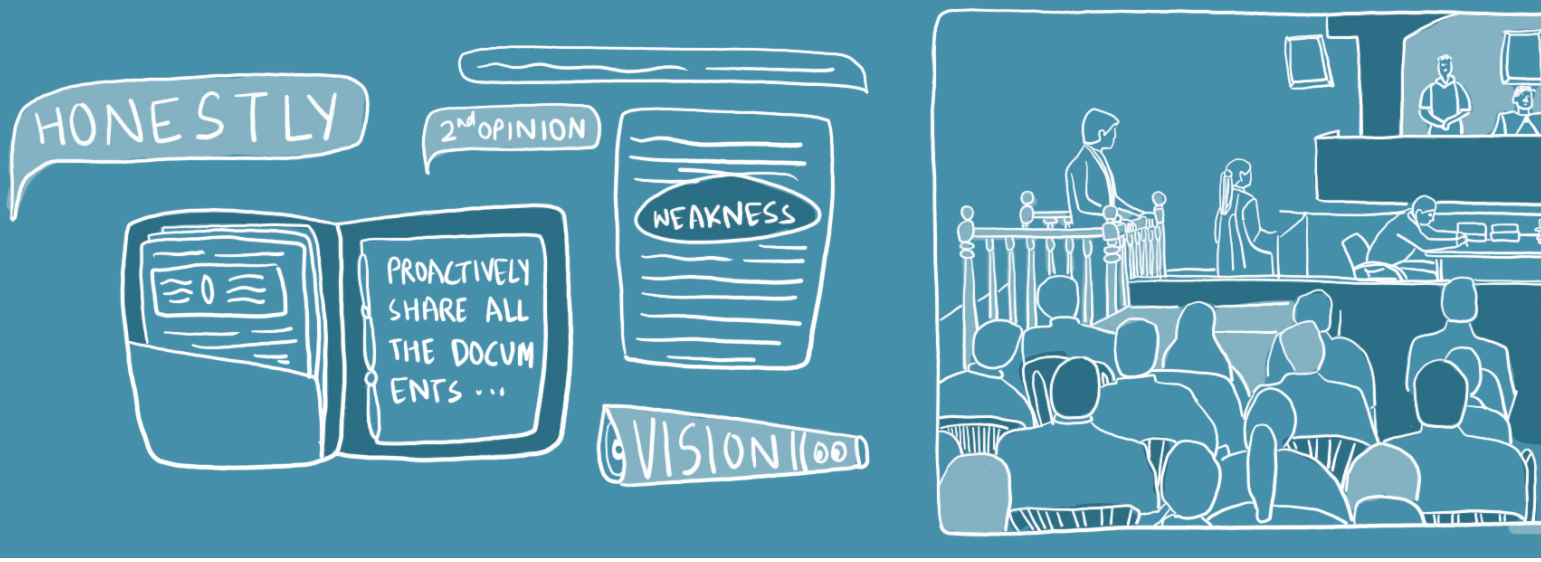

आग्रह करें. इसके बाद ही आप उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के पास जा सकते हैं.

उत्प्रेषण: इस रिट का उपयोग अधिकारियों या मातहत अदालतों या ट्रिब्युनलों के फैसलों को चुनौती देने के लिए किया जाता है. इसमें ऊँची अदालतों से उन फ़ैसलों की समीक्षा करने और उन्हें सुधारने की माँग की जाती है. याद रखें कि अगर लिए गए फैसले की समीक्षा करने का कोई और क़ानूनी उपाय मौजूद है, तो आप उच्च न्यायालय में यह रिट याचिका दायर नहीं कर सकते हैं. जैसे कि मान लीजिए अगर आप ज़िला उपभोक्ता फोरम के किसी फ़ैसले को चुनौती देना चाहते हैं, तो इसके लिए आप सीधे उच्च न्यायालय में रिट याचिका नहीं दाख़िल कर सकते हैं. आपको पहले राज्य उपभोक्ता शिकायत निबटारा आयोग में अपील करना होगा.

निषेध: इस रिट का उपयोग निचली अदालतों और ट्रिब्यूनलों को ऐसे फ़ैसले लेने से रोकने के लिए किया जाता है, जो उनके क़ानूनी प्राधिकार से बाहर हैं.

अधिकार पृच्छा: इस याचिका का उपयोग सार्वजनिक कर्मियों/अधिकारियों के प्राधिकार पर सवाल उठाने के लिए किया जाता है. इसके तहत उनसे पूछा जा सकता है कि वे अपने पद पर होने के अधिकार को साबित करें. जैसे कि अगर कोई व्यक्ति किसी विशेष पद पर नियुक्त हुआ हो लेकिन वह इसकी पात्रता पूरी न करता हो, तब आप उस व्यक्ति के ख़िलाफ़ उच्च न्यायालय के पास जाकर अधिकार पृच्छा की रिट याचिका दायर कर सकते हैं. रिट के सभी प्रकारों में अधिकार पृच्छा रिट याचिका में कानूनी स्थिति का नियम सबसे लचीला है.

किसी वकील से मिलना

वकील बहुत जानकार लोग होते हैं और कभी कभी वे बहुत व्यस्त होते हैं. वकीलों से मिलने में मुमकिन है कि आप डर और हतोत्साहित महसूस करें. अगर आप पहली बार किसी वकील से मिल रहे हों, तो निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें:

(क) वकीलों की भूमिका आपकी मदद करने और अदालत के सामने आपका मामला पेश करने की है. वे तभी आपकी मदद कर सकते हैं अगर आप उनकी मदद करें. इसलिए आपको अपने वकील के साथ ईमानदार होना चाहिए और उनके सवालों के जवाब सावधानी से देने चाहिए.
(ख) आपके पास मामले से संबंधित जो भी दस्तावेज़ हों आप ख़ुद उन्हें अपने वकीलों को सौंपें. वे कितने प्रासंगिक हैं इसका फ़ैसला आप न करें, वकीलों पर छोड़ दें.
(ग) अपने वकील को बताएँ कि आप इस मामले से किस तरह का हल चाहते हैं.
(घ) कभी-कभी वकील आपको आपके मामले की कमज़ोरी के बारे में भी बताएंगे. यह एक अच्छा संकेत है, क्योंकि वकील आपके मामले में दिलचस्पी ले रहे हैं और आपके साथ ईमानदारी से पेश आ रहे हैं.
(च) अगर आप ख़र्च उठा सकते हों तो किसी दूसरे वकील से सलाह लेने में न हिचकें.

अगर आप वकील का ख़र्च नहीं उठा सकते हैं लेकिन आप यह भी नहीं चाहते कि आप सरकारी वकील की मदद लें या सरकारी क़ानूनी मदद लें तो आप ख़ुद अपना वादी यानी 'लिटिगंट इन पर्सन' बन सकते हैं. लिटिगंट इन पर्सन वे लोग होते हैं जो सुसंगत तरीक़े से सोचते हैं और अपनी समस्या को क़ानूनी रूपरेखा के साथ अदालत के सामने पेश कर सकते हैं.

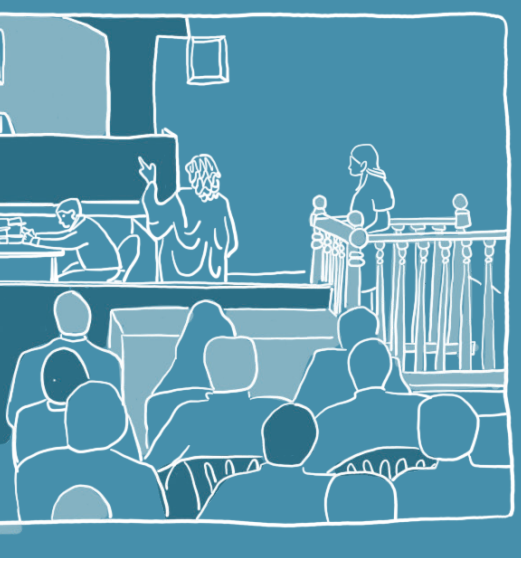

अदालत के कमरे में दाख़िल होना

अदालत के कमरे ऐसी जगहें होती हैं जहाँ जज और वकीलों के बीच मामले के बारे में संवाद होता है. आम तौर पर वादी को इस संवाद से बाहर रखा जाता है. अदालत जब तक आपसे ख़ुद कोई सवाल न करे, अदालत में आपको बोलने से बचना चाहिए. अदालत में लोगों से उम्मीद की जाती है कि वे अदालत के भीतर मर्यादा और शिष्टाचार को बनाए रखें. आपको इन बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

क) आपकी पोशाक उपयुक्त हो
ख) आप समय का ख़्याल रखें
ग) जब आपसे कुछ पूछा न गया हो तो न बोलें
घ) अदालत की इजाज़त से, और अपने वकील के संकेत करने पर बोलें
च) शांत रहें
छ) सावधानी से सुनें

भारत में न्यायिक प्रणाली की सबसे बड़ी समस्याओं में से एक न्यायिक फैसलों में 'देरी' है.

बाधाएँ/जोखिम

वित्तीय: भारत में क़ानूनी सेवाओं का खर्च चुका पाने में अक्षम लोगों के लिए क़ानूनी मदद के प्रावधान के जरिए न्यायिक प्रक्रिया में आने वाले वित्तीय खर्च संबंधी बाधा को दूर कर लिया गया है. भारतीय संविधान में क़ानूनी मदद के अधिकार को स्थापित किया गया है और क़ानूनी सेवाएँ प्राधिकार अधिनियम, 1987 में भी इसे मुहैया कराया गया है. इस अधिनियम के तहत, ज़रूरतमंद लोगों को क़ानूनी मदद मुहैया कराने के लिए राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तरों पर क़ानूनी सेवा प्राधिकारों को स्थापित किया गया है. लेकिन भारत में क़ानूनी मदद की व्यवस्था पर बहुत अधिक बोझ है जिसके नतीजे में अच्छी और कारगर क़ानूनी सेवाओं में कमी पाई जाती है.

न्यायिक प्रणाली में समय और देरी: भारतीय अदालतों में होने वाली देरी इंसाफ़ हासिल करने में एक अहम जोखिम और ख़तरा है. यह देरी कई वजहों से हो सकती है जिसमें अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा, संसाधनों की किमी, और काम के बोझ से दबी अदालती व्यवस्था और लंबी कार्यवाहियाँ शामिल हैं. इसलिए अदालत के पास जाने का अधिकार भले हो, देरी की वजह से अक्सर यह अधिकार निरर्थक महसूस होता है. अदालतें भी पक्षों को प्रोत्साहित करती हैं कि वे अपने विवादों का निबटारा करने के लिए वैकल्पिक प्रणालियों की मदद लें.

प्रक्रिया संबंधी देरी: हरेक अदालत के पास एक प्रणाली होती है जो यह सुनिश्चित करती है कि अदालत के सामने रखे गए आवेदन और याचिकाएँ जजों के सामने समुचित आकार-प्रकार में पहुँचें. इसलिए मामला दायर करते समय बहुत संभव है कि विषय-वस्तु और उसके स्वरूप पर कुछ आपत्तियाँ आपके सामने आ सकती हैं. जैसे कि सर्वोच्च न्यायालय में एक मामला दायर करते समय इसकी अनुमति नहीं है कि आप साथ में ऐसा कोई दस्तावेज़ जमा करें जो स्थानीय भाषा में ही हो और उसका एक आधिकारिक अंग्रेज़ी अनुवाद भी साथ में न दिया गया हो. इसी तरह प्रक्रिया संबंधी अनेक ज़रूरतें भी होती हैं.

शब्दावली

हलफ़नामा:
एक क़ानूनी दस्तावेज़ जिसमें कोई व्यक्ति शपथ लेकर तथ्यों को बयान करता है. हलफ़नामे में अदालत के आगे कुछ निश्चित तथ्यों की पुष्टि की जाती है. मनोज की कहानी में, एक हलफ़नामे को एक क़ानूनी दस्तावेज के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता था, जहाँ मनोज ने अदालत के सामने अपने बीमा दावे के बारे में तथ्यों को बयान किया हो.

दीवानी मामले:
दीवानी मामले करारनामों और संपत्ति को लेकर लोगों या संगठनों के बीच में क़ानूनी विवाद को कहते हैं. फ़सल बीमा पर अपने दावे को लेकर बीमा कंपनी के साथ मनोज का विवाद दीवानी मामले का एक उदाहरण है, जहाँ उसने करारनामे से जुड़े एक मामले के लिए क़ानूनी समाधान हासिल करने की कोशिश की.

न्यायालयांची पदानुक्रम:
न्यायालयांची क्रमवारी, ज्यामध्ये काहींना इतरांपेक्षा अधिक अधिकार आहेत. पदानुक्रमात पुढे असलेल्या न्यायालयांना खालच्या न्यायालयांच्या आदेशांचे पुनरावलोकन करण्याचा आणि त्यांना बाजूला ठेवण्याचा किंवा त्यांच्या निर्णयाची पुष्टी करण्याचा अधिकार आहे.

न्यायिक अधिकार क्षेत्र:
कुछ निश्चित मामलों की सुनवाई करने और फ़ैसला करने की किसी अदालत की शक्ति. मनोज ने जहाँ अपने मामले को दाख़िल किया था, उस अदालत के अधिकार क्षेत्र में बीमा दावों संबंधी मामलों का फ़ैसला करना आता था.

समय-सीमा
एक क़ानूनी मामला दाख़िल करने की समय-सीमा.

अवयस्क:
भारत में मेजॉरिटी एक्ट, 1875 के मुताबिक़, 18 साल से कम का कोई भी व्यक्ति अवयस्क माना जाता है.

नोटरी:
इन्हें पब्लिक नोटरी के नाम से भी जाना जाता है. ये ऐसे व्यक्ति होते हैं जो दस्तावेज़ों की क़ानूनी वैधता के गवाह बनने और उन पर दस्तख़त करने के लिए अधिकृत होते हैं. नोटरी वकील हो सकते हैं ये वे अधिकृत अधिकारी हो सकते हैं. सभी अदालत परिसरों में आप नोटरियों को पा सकते हैं जहाँ आप अपने दस्तावेज़ों को ले जाकर उन पर दस्तख़त और मुहर लगवा सकते हैं, यानी उन्हें 'नोटराइज्ड' करा सकते हैं.

पूर्व का उदाहरण:
अतीत का कोई अदालती फ़ैसला जो भविष्य में एक मिलते-जुलते मामले में फ़ैसले में मदद कर सकता हो. अदालत में मनोज की विजय ने एक कानूनी मिसाल क़ायम की, जिससे भविष्य में इससे मिलते-जुलते मामलों के लिए मार्गदर्शन मिल सकता है. ख़ास कर उन दूसरे किसानों को जो फ़सल बीमा दावों को लेकर समस्याओं का सामना कर रहे हैं.

नियम:
नियम ऐसी गाइडबुक्स होती हैं जो क़ानूनों को बेहतर तरीक़े से समझने और उनका पालन करने में मदद करती हैं. चूँकि इतनी अलग-अलग क़िस्म की स्थितियाँ हैं, इसलिए क़ानून निर्माता हरेक चीज़ के लिए क़ानून नहीं बना सकते हैं. इसलिए, वे इसके लिए 'नियम' बनाते हैं. ये नियम सरकारी विभागों द्वारा बनाए जाते हैं और वे इसका विवरण देते हैं कि मुख्य क़ानूनों का उचित रूप से किस तरह पालन किया जाए. एक तरह से ये अतिरिक्त सूचनाएँ देते हैं ताकि इसे सुनिश्चित किया जा सके कि हर कोई यह जान जाए कि क़ानूनों का सही-सही पालन करने के लिए क्या करना होगा.

क़ानून/विधान/विधि:
क़ानून निर्माताओं द्वारा बनाए गए लिखित क़ानून. इन्हें विधान भी कहा जाता है, ये "बेयर एक्ट्स" के नाम से जानी जाने वाली किताबों में शामिल होते हैं. क़ानूनों को अध्यायों में बाँटा जाता है, जिन्हें सेक्शनों और सब-प्रावधानों में उपविभाजित किया जाता है.